क़ुरआन की आर्थिक शिक्षाएँ

संकलनकर्ता
डॉ॰ फ़रहत हुसैन
(एम॰कॉम, पी एच॰डी॰)

विषय-सूची

स्तावना 5

ध्याय 1. स्वामित्व (Ownership) 6

.1 अवधारणा 6

.2 संसाधनों का वास्तविक स्वामी अल्लाह है 6

.3 संसाधनों से लाभ उठाने का अधिकार मनुष्य को है 7

.4 मनुष्य को सम्पत्ति के स्वामित्व का प्रतिबन्धित अधिकार 7

.5 वैध या अवैध घोषित करने का अधिकार अल्लाह को है 9

ध्याय 2. धन-सम्पत्ति (Wealth) 10

.1 अवधारणा 10

.2 धन महत्त्वहीन है 10

.3 व्यापार तथा अन्य वैध तरीक़ों से ही धन-सम्पत्ति का
हस्तान्तरण हो सकता है 10

.4 धन को साध्य बनाना विनाश को निमन्त्रण देना है 11

.5 आर्थिक समानता 12

ध्याय 3. जीविकोपार्जन (Livelihood) 14

1 अवधारणा 14

2 आजीविका अल्लाह उपलब्ध कराता है 14

3 वैध-अवैध घोषित करने का अधिकार अल्लाह को है 15

4 आजीविका के लिए दौड़-धूप करने का आदेश 15

5 जीविकोपार्जन के अवैध तरीक़े 16

6 इस्लाम आय की कृत्रिम समानता का पक्षधर नहीं 17

7 उपार्जित आय को फ़ुज़ूल में उड़ाने की अनुमति नहीं 18

ध्याय 4. उत्पादन के साधन (Means of production) 19

1 सत्ता एवं सम्प्रभुता अल्लाह की है. 19

2 भूमि (Land) 20

3 श्रम (Labour) 21

4 पूँजी (Capital) 22

4.5 उद्यम (Enterprise) 24
अध्याय 5. उपभोक्ता-व्यवहार (Consumer Behaviour) **15**
5.1 अवधारणा 25
5.2 मध्यमार्गी व्यवहार 25
5.3 असम्पन्न को क्रय-शक्ति प्रदान करने का प्रबन्ध 26
5.4 उपभोक्ता-व्यवहार द्वारा वित्त का संचार 26
5.5 आर्थिक व्यवहार के सन्तुलन हेतु क़ानूनी प्रतिबन्ध 26
अध्याय 6. लोक-वित्त (Public Finance) **27**
6.1 ज़कात (Poor Due) 27
6.2 ऐच्छिक योगदान 28
6.3 अन्य स्रोत 28
6.4 मूलाधार 29
अध्याय 7. आर्थिक विकास (Economic Development) **30**
7.1 अवधारणा 30
7.2 धनोपार्जन की दौड़-धूप 30
7.3 भयरहित व उपद्रवरहित वातावरण का निर्माण 30
7.4 अपव्यय पर रोक 31
7.5 कंजूसी भी नहीं 31
7.6 व्यापार-चक्र (Trade Cycle) 32
7.7 प्रसंविदा एवं लिखित प्रमाण का प्रचलन 32
7.8 नियम-क़ानून 33
7.9 कुछ बुनियादी शिक्षाएँ 33
7.10 ब्याज पर रोक 33
अध्याय 8. मानवीय मूल्यों पर आधारित अर्थव्यवस्था **34**
(Economy Based on Human Values)
8.1 नैतिक मूल्यों का महत्त्व 34
8.2 सामान्य सिद्धान्त 34
8.3 विशिष्ट सिद्धान्त 35
अध्याय 9. इस्लामी आर्थिक प्रणाली की विशेषताएँ **38**
(Characteristics of Islamic Economic System)

बिसमिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम
"अल्लाह कृपाशील, दयावान के नाम से।"

प्रस्तावना

आज सम्पूर्ण विश्व, यहाँ तक कि विकसित देश भी, आर्थिक संकट से जूझ रहे हैं। साम्यवाद, जो कि आर्थिक कल्याण और समृद्धि के ऊँचे दावे लेकर आया था, परास्त होकर मैदान छोड़ गया है। पूँजीवादी देश तेज़ी-मन्दी के व्यापार-चक्रों के चक्रवात में फंसे हैं। ऐसे में एक नई आर्थिक व्यवस्था (New Economic Order) की ओर सभी की नज़रें लगी हुई हैं। मुस्लिम अर्थशास्त्रियों ने बड़ी ही सशक्त और वैज्ञानिक शैली में पूर्ण विश्वास के साथ इस्लामी आर्थिक प्रणाली को एक वैकल्पिक व्यवस्था के रूप में प्रस्तुत किया है। पाश्चात्य अर्थशास्त्री भी मुस्लिम अर्थशास्त्रियों के विचारों को महत्व दे रहे हैं (बोल्डिंग आदि)। इस्लामी अर्थव्यवस्था पर अधिकांश कार्य अरबी, फ़ारसी, अंग्रेज़ी तथा उर्दू में हुआ है। आवश्यकता है कि हिन्दी भाषी लोगों के लिए भी ज्ञान के इस भंडार को उनकी अपनी भाषा में प्रस्तुत किया जाए।

इसी उद्देश्य से पवित्र क़ुरआन की प्रमुख आर्थिक शिक्षाओं का संकलन प्रस्तुत है। जहाँ आवश्यकता प्रतीत हुई, वहाँ क़ुरआन के अंशों के अनुवाद के साथ-साथ संक्षिप्त व्याख्या भी दी गई है।

इस संकलन की तैयारी में स्व० मौलाना सैयद अबुल आला मौदूदी की उर्दू पुस्तक 'मआशियाते इस्लाम' (सम्पादक प्रो० ख़ुरशीद अहमद) से विशेष रूप से लाभ उठाया गया है। अन्य पुस्तकों की सहायता भी ली गई है, जिनकी सूची अन्त में दे दी गई है।

मुझे विश्वास है कि हिन्दी भाषी बुद्धिजीवी प्रस्तुत संकलन से अवश्य लाभान्वित होंगे।

—फ़रहत हुसैन

अध्याय-1

स्वामित्व (Ownership)

1.1 अवधारणा

सम्पत्ति के स्वामित्व को लेकर विश्व की दो बड़ी आर्थिक प्रणालि पूँजीवाद तथा समाजवाद — एक-दूसरे से भिन्न विचार प्रस्तुत करती रही है इस्लाम का दृष्टिकोण इन दोनों से अलग है। क़ुरआन के अनुसार ब्रह्माण (Universe) में जो कुछ है उसका स्रष्टा अल्लाह है। इसलिए वही सम्पू जगत् तथा उसमें विद्यमान प्रत्येक वस्तु का वास्तविक स्वामी है। मनुष्य, चूँि धरती पर अल्लाह का ख़लीफ़ा (प्रतिनिधि) है, इसलिए अल्लाह ने मनुष की आवश्यकताओं की पूर्ति की व्यवस्था की और संसाधनों के प्रयोग व अधिकार दिया। इस प्रकार अल्लाह की प्रभुसत्ता को स्वीकारते हुए मनुष को सम्पत्ति के स्वामित्व का अधिकार दिया गया। इस आशय की क़ुरआन व आयतें[1] प्रस्तुत हैं—

1.2 संसाधनों का वास्तविक स्वामी अल्लाह है

"वही तो है जिसने तुम्हारे लिए धरती की सारी चीज़ें, पैदा की हैं।" (2 : 29

"वही तो है जिसने धरती को फैलाया और उसमें पहाड़ बनाए औ नदियाँ बहा दीं और प्रत्येक प्रकार के फलों के जोड़े बनाए।" (13 : 3

"कभी तुमने सोचा, ये बीज जो तुम बोते हो इनसे खेतियाँ तुम उगाते ह या इनके उगानेवाले हम हैं (यानी अल्लाह है)।" (56 : 63-64

"आकाशों और धरती में जो कुछ है सब उसी (अल्लाह) का है सबको उसका आज्ञापालन करना होता है।" (21 : 116

---

1. क़ुरआन के सन्दर्भ में पहली संख्या सूरा (अध्याय या खण्ड) को तथा दूसरी संख आयत (वाक्य या वाक्य समूह) को बताती है। 2 : 10 का अर्थ है कि दूसरी सूरा व दसवीं आयत।

1.3 संसाधनों से लाभ उठाने का अधिकार मनुष्य को है

''हमने तुम्हें धरती में अधिकारों के साथ बसाया और तुम्हारे लिए यहाँ पर जीवन-सामग्री जुटाई।'' (7 : 10)

''वही तो है जिसने तुम्हारे लिए धरती को वशीभूत कर रखा है, चलो उसके ऊपर और खाओ उसकी रोज़ी, तुम्हें पुनः ज़िन्दा होकर उसी के पास लौटना है।'' (67 : 15)

पुनः अल्लाह के पास लौटकर जाने की बात इसलिए बताई जा रही है कि धरती पर उत्तरदायित्व या जवाबदेही (Accountability) के एहसास के साथ जीवन-यापन करो।

''अल्लाह, वही तो है जिसने धरती और आकाशों को पैदा किया और आकाश से पानी बरसाया, फिर उससे तुम्हारी आजीविका हेतु, भाँति-भाँति के फल पैदा किए; जिसने नौका को तुम्हारे लिए वशीभूत किया कि समुद्र में तुम्हारे आदेश से चले और नदियों को तुम्हारे वश में कर दिया; जिसने सूरज और चाँद को तुम्हारे वशवर्ती[1] किया कि निरन्तर चले आ रहे हैं; और दिन-रात को तुम्हारे लिए वशवर्ती किया; और जिसने तुम्हें वह सब कुछ दिया जो तुमने माँगा।[2] यदि तुम अल्लाह की नेमतों की गणना करना चाहो तो नहीं कर सकते।'' (14 : 32-34)

1.4 मनुष्य को सम्पत्ति के स्वामित्व का प्रतिबन्धित अधिकार

क़ुरआन निजी सम्पत्ति के अधिकार को न तो पूँजीवाद की भाँति स्वच्छन्द और निर्बाध रखता है और न साम्यवाद की तरह उपभोक्ता वस्तुओं तथा उत्पत्ति के साधनों का अस्वाभाविक वर्गीकरण करके उत्पत्ति के सभी साधनों को राज्य के नियन्त्रण में देने का पक्षधर है; वरन् कुछ प्रतिबन्धों के साथ निजी सम्पत्ति का अधिकार मनुष्य को देता है। हाँ, यदि जनहित में आवश्यक हो तो किसी वस्तु या सम्पत्ति को सामूहिक कार्य हेतु आरक्षित किया जा सकता है।

---

1. वशीभूत और वशवर्ती करने का आशय यह है कि इन सभी चीज़ों को अल्लाह ने ऐसे नैसर्गिक नियमों का पाबन्द बनाया कि ये मनुष्य के लिए हितकारी हो रही हैं।
2. अर्थात् मानव-जीवन के लिए जो कुछ अभीष्ट था वह सब जुटाया।

"लोगों के लिए मनपसन्द चीज़ें— स्त्रियाँ, सन्तान, सोने-चाँदी के ढेर चुने घोड़े, चौपाए एवं कृषि की भूमि— बड़ी लुभावनी बना दी गई हैं।" (3 : 14)

अर्थात् मनुष्य स्वभावतः रिश्ते-नातों के साथ-साथ सांसारिक वस्तुओं की प्राप्ति की इच्छा भी रखता है।

"एक-दूसरे के माल अनधिकृत रीति से न खाओ, आपसी रज़ामंदी से व्यापारिक (लेन-देन) होना चाहिए।" (4 : 29)

"अल्लाह ने व्यापार को वैध तथा ब्याज को वर्जित ठहराया।" (2 : 275)

"अगर तुम ब्याज लेने से तौबा कर लो तो अपना मूलधन लेने के तुम अधिकारी हो।" (2 : 279)

"जब किसी निश्चित समय के लिए तुम आपस में ऋण का मामला करो तो उसे लिख लिया करो।" (2 : 282)

"पुरुषों के लिए उस माल में हिस्सा है जो माँ-बाप तथा नातेदारों ने छोड़ा हो और स्त्रियों का भी उस माल में हिस्सा है जो माँ-बाप तथा नातेदारों ने छोड़ा हो।" (4: 7)

"अपने घरों के अतिरिक्त दूसरे घरों में प्रवेश न किया करो जब तक कि घरवालों से अनुमति न ले लो।" (24 : 27)

"क्या ये लोग देखते नहीं कि हमने अपने हाथों की बनाई हुई वस्तुओं में से इनके लिए चौपाए पैदा किए और अब ये इनके मालिक हैं। (36 : 71)

"ऐ नबी! उनके माल में से ज़कात वसूल करो।"

"यतीमों (अनाथों) का माल उनके हवाले करो.... और उनका माल अपने माल के साथ मिलाकर न खा जाओ।" (4 : 2)

"औरतों को उनके मेहर प्रसन्नतापूर्वक अदा करो।" (4 : 4)

"उनके माल में हक़ है; मदद माँगनेवाले का और वंचित रह जानेवाले का।" (51 : 19)

उपर्युक्त क़ुरआनी उद्धरण निजी स्वामित्व के अधिकार को मान्यता प्रदान कर रहे हैं। एक-दूसरे के माल अनधिकृत रूप से न खाने के आदेश का अर्थ यही है कि प्रत्येक व्यक्ति अपने माल का स्वामी है। उसके स्वामित्व की

रक्षा होनी चाहिए। व्यापार तथा क्रय-विक्रय द्वारा स्वामित्व परिवर्तन हो सकता है। ब्याजरहित ऋण लिया-दिया जा सकता है। पैत्रिक सम्पत्ति में हिस्सा मिलने पर स्वामित्व मिल जाता है। आवासीय खण्ड में बिना अनुमति प्रवेश को रोककर गृह-स्वामी के अधिकार को स्वीकारा गया है। माल में से दान-पुण्य वही कर सकता है जो उस माल की मिलकियत भी रखता हो।

1.5 वैध या अवैध घोषित करने का अधिकार अल्लाह को है

प्रत्येक वस्तु का वास्तविक स्वामी अल्लाह है। इसलिए मनुष्य के लिए कौन-सी वस्तु वैध (हलाल) है और कौन-सी अवैध (हराम) है; इसके निर्णय एवं घोषणा का अधिकार अल्लाह को है। अल्लाह का नबी (ईशदूत) अल्लाह के आदेशों के आधार पर मार्गदर्शन करता है। अन्य किसी को यह अधिकार प्राप्त नहीं है।

"अपनी ज़बानों से ये झूठे आदेश पारित न करो कि यह वैध है और यह अवैध है।" (16 : 116)

"वह (नबी सल्ल०) उन्हें नेकी का हुक्म देता है, बुराई से रोकता है, उनके लिए पवित्र (पाक) चीज़ें वैध और अपवित्र चीज़ें अवैध ठहराता है और उन पर से वे बोझ और प्रतिबन्ध हटाता है, जिनमें वे जकड़े हुए थे।"[1] (7 : 157)

---

1. अन्धविश्वास, धर्मान्धता अतिशयोक्ति तथा अज्ञान के कारण मनुष्य ने अनेकों प्रकार के रस्मो-रिवाज और कर्मकाण्डों के बोझ अपने ऊपर लाद लिए थे। हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) ने अल्लाह के हुक्म से मनुष्य को उन सबसे छुटकारा दिलाया।

अध्याय–2

धन–सम्पत्ति (Wealth)

2.1 अवधारणा

धन–सम्पत्ति पर सदैव ही अध्ययन एवं चर्चा होती रही है और साथ ही इसके बारे में अलग–अलग मत भी पाए जाते रहे हैं। एक वर्ग ने धन को आवश्यकता से अधिक महत्व देकर इसे पूज्य और साध्य बना डाला जबकि दूसरे वर्ग ने इसके त्याग तथा बहिष्कार को ही नेकी तथा आत्मिक शुद्धि का पैमाना घोषित कर दिया और संन्यास के मार्ग को उत्तम कहा। इस्लाम धन–सम्पत्ति तथा समस्त आर्थिक संसाधनों को मानव–जाति की आवश्यकता पूर्ति हेतु साधन (Means) के रूप में प्रस्तुत करता है। पवित्र क़ुरआन धन–दौलत की प्राप्ति की मनाही नहीं करता मगर धन–लौलुपता से रोकता है। दूसरों का माल नाहक़ हड़पने की अनुमति नहीं देता। इस आशय की क़ुरआन की आयतें अलग–अलग शीर्षकों में प्रस्तुत हैं—

2.2 धन महत्त्वहीन है

"जो कुछ तुम लोगों को दिया गया है वह केवल कुछ थोड़े दिनों की सांसारिक सामग्री है और जो कुछ अल्लाह के यहाँ है वह अच्छा भी है और शेष रहनेवाला भी है।" (42 : 36)

"यह सब (धन–सम्पत्ति) तो केवल सांसारिक जीवन की सामग्री है और परलोक, तेरे प्रभु के यहाँ केवल डर रखनेवालों के लिए है।"(43 : 35)

2.3 व्यापार तथा अन्य वैध तरीक़ों से ही धन–सम्पत्ति का हस्तांतरण हो सकता है

"एक–दूसरे का माल अवैध रूप से न खाओ, आपसी सहमति से व्यापारिक लेन–देन होना चाहिए।" (4 : 29)

"अल्लाह ने व्यापार को वैध तथा ब्याज को अवैध ठहराया।" (2:275)

मृतक व्यक्ति के उत्तराधिकारियों को उस व्यक्ति की धन-सम्पत्ति में हिस्सा मिलता है —

"पुरुषों के लिए उस माल में हिस्सा है जो माता-पिता तथा नातेदारों ने छोड़ा हो और स्त्रियों के लिए भी उस माल में हिस्सा है जो माता-पिता तथा नातेदारों ने छोड़ा हो।" (4:7)

क़ुरआन ने पैत्रिक सम्पत्ति में पुत्रों, पुत्रियों तथा अन्य सम्बन्धियों के हिस्से निर्धारित कर दिये हैं। (देखें 4:7-14)

इसके अतिरिक्त वसीयत एवं उपहार द्वारा भी धन का हस्तान्तरण सम्भव है। जायदाद को पुण्यार्थ दान दिया जा सकता है। धन हस्तान्तरण के अनैतिक व अवैध तरीक़ों पर रोक लगा दी गई है।

(देखें : तीसरे अध्याय का प्रस्तर 3.5)

2.4 धन को साध्य बनाना विनाश को निमन्त्रण देना है

"तुम लोगों को अधिक-से-अधिक दौलत समेटने की धुन ने बेसुध कर रखा है, यहाँ तक कि (इसी चिन्ता में) तुम क़ब्र के किनारे तक पहुँच जाते हो। यह कदापि तुम्हारे लिए लाभप्रद नहीं, शीघ्र ही तुम्हें मालूम हो जाएगा।"

(102: 1-5)

"कितनी ही ऐसी बस्तियाँ हम तबाह कर चुके हैं जिनके निवासी अपनी आर्थिक समृद्धि पर अंहकारी हो गए थे।" (28 : 58)

"कभी ऐसा नहीं हुआ कि हमने किसी बस्ती में एक सावधान करनेवाला भेजा हो और उस बस्ती के सम्पन्न लोगों ने यह न कहा हो कि जो सन्देश तुम लेकर आए हो उसको हम नहीं मानते। उन्होंने सदैव यही कहा कि हम तुम से अधिक माल और दौलत रखते हैं और हम कदापि दण्ड के भागी नहीं हैं।"

(34 : 34-35)

अर्थात् धन को 'साधन' से बढ़ाकर जीवन का 'साध्य' बना लेना उसकी प्राप्ति की चिन्ता में बेसुध हो जाना अथवा धनवान होने पर घमण्ड से चूर होकर संमार्ग को ठुकरा देना अत्यन्त घातक है।

2.5 आर्थिक समानता

क़ुरआन इस तथ्य को प्रस्तुत करता है कि मनुष्यों के बीच धन के वितरण (Distribution of wealth) में पूर्ण समानता सम्भव नहीं है।

"वही है जिसने तुम्हें धरती में प्रतिनिधि बनाया और तुम में से कुछ लोगों को कुछ अन्य लोगों की अपेक्षा अधिक उच्च दर्जे दिए, ताकि जो कुछ तुमको दिया गया है उसमें तुम्हारी परीक्षा करे।" (6 : 165)

"देख लो, हमने एक वर्ग को दूसरे की अपेक्षा कैसा आगे रखा है और परलोक में उसके दर्जे बढ़कर होंगे और उसको प्रतिष्ठा भी और अधिक होगी।" (17 : 21)

"हमने दुनिया में मनुष्य के जीवन-यापन के साधन वितरित किए हैं और हमने कुछ लोगों को कुछ अन्य लोगों की अपेक्षा कई दर्जे उच्च रखा है ताकि ये एक-दूसरे से सेवा-कार्य लें।" (43 : 32)

"तेरा प्रभु जिसके लिए चाहता है आजीविका विस्तीर्ण कर देता है और जिसके लिए चाहता है नपी-तुली देता है। वह अपने बन्दों की स्थिति से परिचित है।" (17 : 30)

आजीविका का फैलाव एवं संकुचन व्यक्ति की स्थिति को दृष्टि में रखकर है, न कि संयोगवश अथवा पुरस्कार या दण्डस्वरूप।

"ऐ नबी उनसे कहो, मेरा प्रभु अपने बन्दों में से जिसे चाहता है खुली रोज़ी देता है और जिसे चाहता है नपी-तुली देता है।" (34 : 39)

"आकाश और धरती के ख़ज़ानों की कुंजियाँ उसी के पास हैं, जिसे चाहता है खुली रोज़ी देता है और जिसे चाहता है नपी-तुली देता है।" (42 : 12)

क़ुरआन निर्देशित करता है कि कुछ लोगों को किन्हीं कारणों से जो अधिक साधन उपलब्ध हैं, उन पर ईर्ष्या न की जाए—

"जो कुछ अल्लाह ने तुम में से किसी को दूसरे की तुलना में अधिक दिया है उसकी कामना न करो। जो कुछ पुरुषों ने कमाया है उसके अनुसार उनका हिस्सा है और जो कुछ स्त्रियों ने कमाया है उसके अनुसार उनका हिस्सा है। हाँ, अल्लाह से उदार-दान की प्रार्थना करते रहो। निस्संदेह अल्लाह को हर चीज़ का ज्ञान है।" (4 : 32)

इस्लाम की मान्यता है कि धन का समान-वितरण न तो सम्भव है और न न्यायसंगत व स्वाभाविक ही है। प्रत्येक व्यक्ति की शारीरिक व बौद्धिक शक्तियाँ भिन्न-भिन्न होती हैं। हरेक की परिस्थितियाँ अलग-अलग होती हैं। जब इन चीज़ों में बराबरी नहीं है तो धन के वितरण में बराबरी कैसे सम्भव है। आर्थिक समानता व्यावहारिक भी नहीं है। कृत्रिम ढंग से जब भी और जहाँ भी ऐसा किया गया, परिणाम घातक सिद्ध हुए हैं। इसलिए इस्लाम धन के न्यायपूर्ण (Equitable) वितरण पर बल देता है। इसके लिए प्रत्येक व्यक्ति को धनोपार्जन के समान अवसर प्रदान किए जाते हैं। धार्मिक, क्षेत्रीय तथा जातीय आधार पर भेदभाव नहीं किया जाता। सभी प्रकार के एकाधिकार पर रोक लगाई जाती है। साथ ही इस्लाम ने धनी और निर्धन के बीच की खाई को पाटने की व्यवस्था भी की है। जुआ, सट्टा, लाटरी, मिलावट, जमाख़ोरी व नैतिक पतन के व्यवसायों पर रोक लगाकर शीघ्र धनी बनने और आर्थिक असमानता बढ़ाने की प्रवृत्ति को समाप्त कर दिया है। ब्याज को पूर्णतः अवैध घोषित किया, जो असमानता को बढ़ाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है। फिर ऐच्छिक व अनिवार्य दान द्वारा धनी वर्ग की दौलत का बहाव ग़रीबों की ओर कर दिया। पूंजीपति को शिक्षा-दीक्षा के द्वारा लोभी बनने के बजाए हमदर्द और त्यागशील बनाने का प्रयास किया। इस प्रकार आर्थिक असमानता का स्वाभाविक एवं व्यावहारिक समाधान प्रस्तुत किया।

अध्याय-3

जीविकोपार्जन (Livelihood)

3.1 अवधारणा

क़ुरआन के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति की आजीविका अल्लाह द्वारा पूर्व निर्धारित है, जिसको पूरा करने का ज़िम्मा उसने अपने ऊपर ले लिया है। जिसे इस बात पर विश्वास हो और इसके उपरान्त भी यदि वह धन कमाने के अनुचित साधनों के पीछे दौड़ता है, तो वह निस्संदेह बड़ा मूर्ख है। उचित-अनुचित, जायज़-नाजायज़ की धारणा इस्लाम की अपनी विशेषता है। पाश्चात्य प्रणाली नैतिक प्रतिबन्धों को आर्थिक जगत् की सीमाओं से बाहर रखती है। उसकी दृष्टि में उपयोगिता, सन्तुष्टि और लाभ प्रदान करनेवाला प्रत्येक कार्य उचित है। नतीजा यह है कि समाज के ताने-बाने बिखर गए हैं। धन कमाने की होड़ में अनैतिक, असामाजिक बल्कि अमानवीय कृत्यों की भरमार से आज विकसित तथा विकासशील सभी देश चिन्तित हैं।

इस प्रकार इस्लामी व्यवस्था में आजीविका के पूर्वनिर्धारण और उसके अल्लाह के ज़िम्मे होने तथा केवल हलाल व जायज़ साधन को अपनाने की बात कहकर आर्थिक गतिविधियों को नैतिक बन्धनों में बाँधा गया है। हराम और नाजायज़ आर्थिक क्रियाओं का स्पष्ट रूप से उल्लेख करके शेष सभी गतिविधियों को जायज़ घोषित किया गया। नैतिक तथा आध्यात्मिक पक्ष पर बल देने के साथ ही इस बात पर समान बल दिया गया है कि लोग धनोपार्जन की क्रियाओं में संलग्न हों। भौतिकता तथा आध्यात्म का यह अद्भुत संगम इस्लाम की विशिष्टता है।

3.2 आजीविका अल्लाह उपलब्ध कराता है

"धरती में चलनेवाला ऐसा कोई प्राणी नहीं है, जिसकी रोज़ी अल्लाह के ज़िम्मे न हो" (11 : 6)

"निस्संदेह अल्लाह ही रोज़ी देनेवाला, दृढ़ शक्तिवाला है।"
(51 : 58)

"अल्लाह ही है जिसने तुम्हें पैदा किया फिर उसने तुम्हें जीवन-सामग्री दी।" (30 : 40)

अर्थात् अल्लाह स्रष्टा भी है और पालनकर्त्ता भी।

"कितने ही जानवर हैं जो अपनी आजीविका उठाए नहीं फिरते। अल्लाह उन्हें रोज़ी देता है और तुम्हें रोज़ी देनेवाला भी वही है। वह सुननेवाला और जाननेवाला है।" (29 : 60)

"वह कौन है जो तुम्हें रोज़ी दे यदि वह (अल्लाह) अपनी रोज़ी रोक ले?" (67 : 21)

"अल्लाह उत्तम प्रबन्धक है आजीविका का।" (62 : 11)

3.3 वैध-अवैध घोषित करने का अधिकार अल्लाह को है

जीविकोपार्जन के कौन-से साधन उचित और वैध हैं और कौन-से अनुचित और अवैध हैं, इसके निर्णय एवं घोषणा का अधिकार इनसान के स्रष्टा, स्वामी और पालनकर्त्ता के पास ही है। (संबन्धित आयतें देखें : प्रथम अध्याय में, प्रस्तर 1.5 पर)

3.4 आजीविका के लिए दौड़-धूप करने का आदेश

इस्लामी व्यवस्था की विशेषता है कि उसमें एक ओर तो सांसारिक माया-मोह को कम किया गया है तो दूसरी ओर संन्यास की अनुमति नहीं दी गई। लोगों को जीविकोपार्जन एवं उत्पादन सम्बन्धी क्रियाओं में भाग लेने का सुस्पष्ट निर्देश देकर संतुलित जीवन-व्यवस्था का एक अद्भुत नमूना 'क़ुरआन' में प्रस्तुत किया गया है—

"नमाज़ पूरी कर लेने के बाद आजीविका प्राप्ति हेतु धरती में फैल जाओ।" (62 : 10)

क़ुरआन में संन्यास की मनाही की गई है :

"लोगों ने संन्यास खुद गढ़ लिया। हमने इसकी अनुमति नहीं दी थी।"
(57 : 2)

3.5 जीविकोपार्जन के अवैध तरीक़े

जीविकोपार्जन के वे सभी तरीक़े व साधन अवैध घोषित किए गए जो मानवजाति के लिए हानिकारक हैं। वर्जित साधनों एवं क्रियाओं के अतिरिक्त शेष क्रियाएँ वैध और जायज़ मानी जाती हैं। क़ुरआन ने धनोपार्जन के जिन तरीक़ों पर प्रतिबन्ध लगाया है, वे ये हैं :

(1) दूसरे का माल उसकी सहमति के बिना या दबाव व धोखे से लेना (2) रिश्वत लेना व देना (3) अमानत में ख़ियानत, चाहे वह व्यक्तिगत सम्पत्ति में हो या सार्वजनिक सम्पत्ति में (4) चोरी-डकैती (5) अनाथ के धन में अवैध हिस्सेदारी (6) नाप-तौल में हेरा-फेरी (7) बेहयाई फैलाने के कारोबार (8) गाने-बजाने का पेशा (9) व्यभिचार और वेश्यावृत्ति का धंधा (10) शराब के कारोबार (11) जुआ और उसकी सभी क़िस्में (12) बुतगिरी (प्रतिमा-निर्माण) और तत्सम्बन्धी कार्य (13) ब्याज, चाहे उसकी दर कम हो या अधिक और चाहे वह व्यक्तिगत हो या व्यापारिक।

उपर्युक्त विधान से सम्बन्धित क़ुरआन की आयतें इस प्रकार हैं—

"तुम लोग आपस में एक-दूसरे का माल अवैध रूप से न खाओ और न अधिकारियों के सम्मुख इस उद्देश्य से प्रस्तुत करो कि तुम्हें दूसरे के माल को जानते-बूझते अवैध ढंग से खाने का मौक़ा मिल जाए।"[1] (2 : 188)

"अगर तुम में से एक व्यक्ति दूसरे पर भरोसा करके कोई अमानत सुपुर्द करे तो जिसपर भरोसा किया गया है उसे चाहिए कि अमानत अदा करे और अल्लाह (अपने पालनहार) से डरे।" (2 : 283)

"जो कोई अपयोजन (सार्वजनिक सम्पत्ति में ग़बन) करे तो वह अपने अपयोजन सहित क़ियामत के दिन उपस्थित होगा, फिर प्रत्येक जीव को उसके किए का पूरा बदला मिलेगा।" (3 : 161)

"जो लोग यतीमों (अनाथों) के माल अवैध रूप से खाते हैं, वे अपने पेटों में आग भर रहे हैं और शीघ्र ही वे नरक में जलेंगे।" (4 : 10)

---

1. अर्थात् अधिकारियों को रिश्वत देकर अनुचित लाभ उठाने की कोशिश न करो। दूसरा अर्थ यह भी है कि जब तुम जानते हो कि माल दूसरे का है, तो किसी अधिकारी के सामने या अदालत में अपनी मिल्कियत सिद्ध करने का प्रयास न करो।

"तबाही है कम तौलनेवालों की कि जब लेते हैं तो पूरा-पूरा लेते हैं और जब दूसरों को नापकर या तौलकर देते हैं तो कम देते हैं।" (83 :1-3)

"जो लोग ईमानवालों में बेहयाई की बातों को फैलाना चाहते हैं उनके लिए दुनिया और आख़िरत में दर्दनाक सज़ा है।" (24 : 19)

"मनुष्यों में कोई ऐसा भी है जो दिल को लुभानेवाली[1] बातों का ख़रीदार बनता है, ताकि अल्लाह के मार्ग से भटका दे ...... ऐसे लोगों के लिए अत्यन्त अपमानजनक यातना है।" (31 : 6)

"अपनी लौंडियों (नौकरानियों) को अपने सांसारिक लाभ के लिए वेश्यावृत्ति पर मजबूर न करो।" (24 : 33)

"व्यभिचार के निकट भी न जाओ यह निर्लज्जतापूर्ण और बुरा मार्ग है।" (17 :32)

"व्यभिचारिणी तथा व्यभिचारी दोनों में से प्रत्येक को सौ कोड़े मारो।" (24 : 2)

"ऐ लोगो, जो ईमान लाए हो! ये शराब और जुआ और देवस्थल और पांसे सब गन्दे शैतानी काम हैं, इनसे बचो।"[2] (4 : 90)

"अल्लाह ने व्यापार को वैध तथा ब्याज को अवैध घोषित किया।" (2 : 275)

"ऐ लोगो, जो ईमान लाए हो! अल्लाह से डरो और अपना प्राप्त ब्याज छोड़ दो; अगर तुम मोमिन हो। परन्तु यदि तुम ऐसा नहीं करते तो अल्लाह और उसके रसूल की ओर से तुम्हारे विरुद्ध युद्ध की घोषणा है। और अगर तौबा कर लो तो तुम्हें अपना मूलधन वापस लेने का अधिकार है।" (2 : 278-279)

3.6 इस्लाम आय की कृत्रिम समानता का पक्षधर नहीं है

(देखिए : अध्याय 2, प्रस्तर 2.5)

---

1. अर्थात नाच गाना-बजाना और दूसरी ख़ुराफ़ात।
2. बचने में इन चीज़ों का व्यापार व व्यवसाय न करने का अर्थ भी सम्मिलित है।

3.7 उपार्जित आय को फ़ुज़ूल में उड़ाने की अनुमति नहीं

पवित्र क़ुरआन इस बात की अनुमति नहीं देता कि कोई व्यक्ति अपनी वैध कमाई को नाजायज़ कामों में उड़ाए अथवा अपने ऐश्वर्य पर अनुचित ढंग से व्यय करे।

"ख़र्च में हद पार न करो, अल्लाह फ़ुज़ूलख़र्ची करनेवालों को पसन्द नहीं करता।" (6 : 141)

"अपव्यय न करो, अपव्यय करनेवाले लोग शैतान के भाई हैं और शैतान अपने प्रभु का नाशुक्र (अकृतज्ञ) है।" (17 : 26-27)

उत्पादन के साधन

(Means of production)

4.1 सत्ता एवं सम्प्रभुता अल्लाह की है

जैसा कि प्रथम अध्याय में चर्चा की गई है कि क़ुरआन के अनुसार अल्लाह सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड का स्रष्टा एवं पालनकर्त्ता है। अतः सत्ता एवं सम्प्रभुता (Sovereignty) उसी की है, सारे साधन उसी के हैं। मनुष्य को, जो धरती पर उसका प्रतिनिधि है, साधनों के प्रयोग, उपयोग तथा दोहन का अधिकार एक ट्रस्टी की भाँति प्राप्त है। इस आशय की मुख्य आयतें इस प्रकार हैं—

"आकाश-समूह और धरती और उनके बीच जो कुछ है सब पर अल्लाह ही की बादशाही है तथा उसे प्रत्येक प्रकार का सामर्थ्य प्राप्त है।" (5 : 120)

"क्या तुम नहीं जानते कि आकाशों और धरती की सत्ता अल्लाह के लिए है?" (2 : 107)

"....आकाश समूह और धरती में जो कुछ है सब उसी का है। सबको उसका आज्ञापालन करना होता है।" (2 : 116)

"वह आकाश समूह तथा धरती जैसी अनोखी नई चीज़ों का रचयिता है।" (2 : 117)

"(मूसा ने) कहा, हमारा प्रभु वह है जिसने हर चीज़ को रूप प्रदान किया और (स्वाभाविक) मार्ग दिखाया।" (20 : 50)

"क्या इन लोगों ने देखा नहीं कि अल्लाह कैसे पहली बार पैदा करता है और उसकी पुनरावृत्ति करता है? निश्चय ही यह (पुनरावृत्ति) अल्लाह के लिए सरल है।" (29 : 19)

"हमने तुम्हें धरती में बसाया, हमने ही तुम्हारे लिए उसमें जीवन निर्वाह के साधन संचित किए।" (7 : 10)

"ऐ आदम की सन्तान! हमने तुम्हारे लिए वस्त्र उतारा है।" (7 : 26)

आशय यह है कि वस्त्र-निर्माण हेतु सामग्री पैदा की तथा मनुष्य को वह समझ प्रदान की कि उसने कपड़ा बनाने की तकनीक का आविष्कार किया।

क़ुरआन में आधुनिक अर्थशास्त्र की शब्दावली में उत्पादन के साधनों का उल्लेख नहीं है, फिर भी भूमि, श्रम, पूँजी, तथा उद्यम के बारे में कुछ बुनियादी वार्ता की गई है।

4.2 भूमि (Land)

प्राचीनकाल से ही भूमि उत्पादन का महत्त्वपूर्ण साधन मानी जाती रही है। विशेषकर कृषि-प्रधान अर्थव्यवस्था में, क्योंकि अधिकांश जनसंख्या कृषि, मत्स्यपालन, पशुपालन आदि द्वारा जीविकोपार्जन करती रही है। भूमि तथा तत्सम्बन्धी मामले काल एवं समय के अनुसार परिवर्तनशील होते हैं, इसलिए इसके बारे में कुछ मूलभूत सिद्धान्त देकर शेष को लोगों की इच्छा पर छोड़ दिया गया है। क़ुरआन में भूमि को कृषि, आवास, सड़क-निर्माण तथा अन्य आर्थिक क्रियाओं में प्रयुक्त होने की बात वर्णित है—

"वही है जिसने तुम्हारे लिए धरती को नर्म बनया।" (67 : 15)

अर्थात् भूमि की ऊपरी परत नर्म बनाई गई, जिसमें हल चलाकर खेती की जा सकती है, मकान बनाने के लिए खोदा जा सकता है, सड़कें बनाई जा सकती हैं। यदि यह चट्टान की भाँति कठोर होती तो ये आर्थिक क्रियाएँ सम्पन्न न हो सकती थीं।

"उसके (धरती के) फलों (उपज) में से खाओ जब कि वे फल दें और उसकी फ़सल कटने के दिन (अल्लाह का) हक़ अदा करो।"[1] (6 : 141)

"वही है जिसने तुम्हारे लिए धरती को बिछौना बनाया और उसमें तुम्हारे लिए रास्ते बनाए।" (20 : 53)

बिछौने से तात्पर्य रहने-बसने योग्य बनाने से है। रास्ते पगडंडियों, सड़कों, घाटियों के दर्रों तथा जलमार्गों के रूप में आर्थिक ढाँचा उपलब्ध कराते हैं।

क़ुरआनी शिक्षाओं के अतिरिक्त हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) के कथनों

---

1. हक़ अदा करने से आशय ज़कात एवं दान-पुण्य आदि है।

में बंजर भूमि को विकसित करने तथा भूमि को बटाई आदि पर देने से सम्बन्धित सभी आवश्यक नियम व क़ानून उपलब्ध हैं।

4.3 श्रम (Labour)

इस्लाम से पूर्व के सभी सभ्य समाजों में मज़दूरों के बजाए गुलामों, दासों के रखने का रिवाज था, जिनका जीवन जानवरों से भी बदतर था। इस्लाम ने भाई–चारे का माहौल बनाया—

"ईमानवाले पुरुष और ईमानवाली स्त्रियाँ ये सब एक–दूसरे के संरक्षक-मित्र हैं।" (9 : 71)

इस प्रकार श्रमिक और नियोक्ता के बीच मधुर सम्बन्ध स्थापित हुए। यहाँ क़ुरआन की उन आयतों को प्रस्तुत किया जा रहा है जिनका सम्बन्ध श्रम से है :

"उन दोनों (स्त्रियों) में से एक ने कहा : पिता जी! इस व्यक्ति को नौकर रख लीजिए। योग्य व्यक्ति, जिसे आप नौकर रखें, वही है जो बलवान और विश्वसनीय हो।" (28 : 26)

श्रमिक व कर्मचारी की पात्रता में सर्वोपरि कार्यक्षमता एवं विश्वसनीयता है।

हज़रत शुऐब (नियोक्ता) ने कहा—

"मैं तुम पर (कार्य में) कठिनता नहीं लाना चाहता, अल्लाह ने चाहा तो तुम मुझे अच्छे लोगों में से पाओगे।" (28 : 27)

"अल्लाह किसी पर उसके सामर्थ्य से अधिक बोझ नहीं डालता।" (2 : 286)

अर्थात् कर्मचारी पर भी कार्यभार उसकी सामर्थ्य के अनुसार होना चाहिए।

"उस (हज़रत यूसुफ़) ने कहा कि धरती के ख़जाने मुझे सौंप दीजिए। निश्चय ही मैं रक्षक और ज्ञान रखनेवाला हूँ।" (12 : 55)

आशय यह है कि उत्तरदायित्व के लिए वही पात्रता रखता है जो स्वयं भी उस कार्य को करने की जानकारी रखता हो तथा उस पर विश्वास भी किया जा सकता हो।

उपर्युक्त आदेशों के अतिरिक्त अत्याचार और शोषण रोकने सम्बन्धं आदेश और नियम श्रम पर भी लागू होते हैं।

4.4 पूँजी (Capital)

कोई भी अर्थ-व्यवस्था पूँजी-निर्माण के बिना जीवित नहीं रह सकती पूँजीवादी अर्थव्यवस्था में पूँजी-निर्माण के प्रोत्साहन हेतु 'ब्याज' को अपनाय गया है जो इस्लामी व्यवस्था में वर्जित है। यहाँ पूँजी पर प्रतिफल (Return पूर्वनिर्धारित नहीं है। बल्कि पूँजीपति को भी जोखिम वहन करना होता है औ लाभ-हानि में सम्मिलित होना होता है। यह विचार स्वाभाविक और न्यायसंग और उत्पादन बढ़ानेवाला है। ब्याज के सम्बन्ध में क़ुरआन ने सविस्तार नियम दिए हैं। उनमें से कुछ प्रमुख नियम प्रस्तुत हैं—

"ऐ ईमान लानेवालो! अल्लाह से डरो और तुम्हारा जो ब्याज लोगं पर है उसे छोड़ दो, अगर तुम मोमिन हो। परन्तु यदि तुमने ऐसा न किया त समझ लो कि अल्लाह और उसके रसूल (संदेशवाहक) की ओर से तुम्हां विरुद्ध युद्ध की घोषणा है।" (2 : 278-279

'युद्ध की घोषणा' का वाक्यांश बता रहा है कि ब्याज का लेन-दे कितना गंभीर अपराध है।

"जो लोग ब्याज खाते हैं उनकी दशा उस व्यक्ति की-सी होती है जिसे शैतान ने छूकर बावला[1] कर दिया हो। वे कहते हैं कि ब्याज भी त व्यापार की भाँति ही है जबकि अल्लाह ने व्यापार को वैध किया है और ब्याज को अवैध। अतः जिस व्यक्ति को उसके प्रभु की ओर से यह उपदेश पहुँच और (उसके पालन में) वह आगे से ब्याज खाने से रुक जाए तो जो कुछ वह पहले खा चुका सो खा चुका उसका मामला अल्लाह के हवाले है। .. अल्लाह ब्याज को घटाता और मिटाता है और सदक़ों (दान-पुण्य) क बढ़ाता है।" (2 : 275-276

"जो ब्याज तुमने दिया है कि लोगों का धन बढ़े तो अल्लाह के अनुसा उससे धन नहीं बढ़ता।" (30 : 39

---

1. मानसिक रूप से विक्षिप्त

ब्याज मानवता विरोधी है, यह स्वार्थ, कंजूसी, तंगदिली पैदा करता है। ब्याज खानेवाला व्यक्ति मानसिक रूप से विक्षिप्त हो जाता है। ब्याज पर आधारित व्यवस्था में सामाजिक तथा मानवीय मूल्यों का पतन हो जाता है। विशुद्ध आर्थिक दृष्टिकोण से भी ब्याज अत्यन्त हानिकारक है। निम्न पंक्तियों में इस पहलू से संक्षेप में विवेचना प्रस्तुत है :

ऋण दो प्रकार के होते हैं— व्यक्तिगत ऋण तथा व्यापारिक ऋण। व्यक्तिगत ऋण अधिकांशतः मज़दूर, छोटे किसान तथा दूसरे कम आयवाले लोग लेते हैं। महाजन और साहूकार सूदी ऋण देकर इन ग़रीबों का ख़ून चूसते हैं। ब्याज ही के कारण उस ऋण की वापसी इन लोगों के लिए कठिन हो जाती है। मूलधन से अधिक ब्याज चुकाने के बाद भी ऋण बना रहता है। मज़दूर के श्रम का अधिकांश भाग महाजन ले जाता है और उसके पास अपना और अपने बच्चों का पेट पालने के लिए धन का घोर अभाव रहता है। सूदी क़र्ज़ में फंसे ये लोग सदैव मानसिक तनाव से ग्रस्त रहते हैं जिससे इनकी कार्य-क्षमता निरन्तर घटती जाती है। पूँजीपतियों और महाजनों के विरुद्ध प्रतिशोध की ज्वाला उनके मन में बैठ जाती है; जो कई बार तो उग्र या हिंसक रूप धारण कर लेती है।

व्यापारिक ऋणों पर भी पूर्व-निर्धारित दर से ब्याज वसूलने का कोई औचित्य नहीं है, वरन् अनगिनत हानियाँ हैं, जिनमें से कुछ मुख्य इस प्रकार हैं :

(1) ऐसी सारी योजनाएँ जो प्रचलित ब्याज दर से कम लाभ अर्जित करनेवाली हों, धन विनियोग (Investment) के लिए 'अनुपयुक्त' मानी जाती हैं, चाहे जनमानस के लिए कितनी कल्याणकारी और हितकर क्यों न हों।

(2) जिन व्यापारिक व्यावसायिक या कृषि कार्य-हेतु ऋण लिया जाता है उसमें लाभ की दर पहले से निर्धारित नहीं होती, बल्कि नुक़सान होने का जोखिम मौजूद रहता है। जबकि ऋणदाता की दर पूर्व निर्धारित एवं सुरक्षित होती है जो न तो तर्कसंगत है, न न्यायपूर्ण। क्योंकि ऋण लेनेवाले व्यापारी और कृषक को अपना समय, श्रम और स्वयं की पूँजी सब कुछ कारोबार में झोंक देने के बाद भी नुक़सान का ख़तरा मौजूद है, मगर पूँजीपति अपनी रक़म उधार देने के बाद ब्याज सहित वसूलने का पूरा हक़दार है।

(3) पूँजी लगानेवाला क्योंकि लाभ-हानि में भागीदार नहीं होता, इसलिए

उसे कारोबार के भविष्य की कोई चिन्ता नहीं होती। वह केवल इस बात पर नज़र रखता है कि उसकी पूँजी डूब न जाए। जैसे ही वह मंदी के संकेत देखता है या व्यवसाय को संकट में देखता है तो उसे सहारा देने के बजाए बड़े स्वार्थी ढंग से अपनी पूँजी वापस लेने का प्रयत्न करता है।

ब्याज की इन तीन बड़ी हानियों को देखकर अनुमान लगाया जा सकता है कि ब्याज दौलत को बढ़ाता नहीं, बल्कि घटाता है।

4.5 उद्यम (Enterprise)

उद्यमी या कारोबारी भविष्य में हानि होने की सम्भावना का ख़तरा मोल लेता है, जिसे जोखिम (Risk) कहते हैं। परन्तु अनेक बार देखा गया है कि हानि होने पर 'उद्यमी' अपना साहस खो बैठता है। क़ुरआन ने इसकी व्यवस्था की है। प्रथम तो यह कि 'वित्त' उपलब्ध करानेवाला क्योंकि लाभ–हानि में शरीक होता है इसलिए हानि होने की दशा में उद्यमी अकेला नहीं रह जाता। इससे उद्यमी के मनोबल में गिरावट नहीं आती। दूसरे, क़ुरआन ने विभिन्न प्रकार के घाटों को स्वाभाविक और परीक्षार्थ माना है। उन पर दिल छोटा करने के बजाए धैर्य रखने का उपदेश दिया है। मानसिक तनाव से मुक्त रहने के लिए प्रभु की ओर पलटने की बात बताकर तसल्ली दी गई है।

"निस्सन्देह हम तुम्हारी परीक्षा लेंगे कुछ भय से, कुछ भूख से, कुछ जान–माल और पैदावार के घाटे से; तो सब्र करनेवालों (धैर्यवानों) को शुभ सूचना दे दो। ये वे लोग हैं कि जब इन्हें कोई मुसीबत पहुँचती है तो कहते हैं कि बेशक हम अल्लाह ही के लिए हैं और हमें उसी की ओर पलटकर जाना है।" (2 : 155–156)

यहाँ यह स्पष्ट कर देना उचित होगा कि यदि कुप्रबन्ध तथा अन्य नियन्त्रण योग्य तत्वों के कारण हानि होती है तो उद्यमी को उन्हें दूर करने का प्रयास करना चाहिए। सभी आवश्यक उपायों को करने के बाद भी यदि हानि हो जाए तो उस पर हताश होने के बजाय सब्र से काम लेना चाहिए।

अध्याय:5

उपभोक्ता-व्यवहार

(Consumer Behaviour)

5.1 अवधारणा

क़ुरआन उपभोक्ता के व्यवहार को मध्यमार्गी व्यवहार के रूप में प्रस्तुत करके एक ओर फ़ुज़ूलख़र्ची तथा विलासिता से रोकता है तो दूसरी ओर कंजूसी को नापसन्द करता है। इससे उपभोग नियन्त्रित रहता है और उत्पादन निर्बाध रूप से जारी रहता है जिससे व्यक्तिगत स्तर पर अतिरेक (Surplus) का सृजन होता है। इस अतिरेक को अनिवार्य व ऐच्छिक दान-पुण्य द्वारा समाज के आर्थिक रूप से कमज़ोर लोगों तक पहुँचाया जाता है। इस्लाम में दान-पुण्य भीख नहीं है, बल्कि सम्पन्न के धन में असम्पन्न का अधिकार है।

(देखें क़ुरआन, 17 : 26)

इस्लामी व्यवस्था में उपभोक्ता के व्यवहार का आर्थिक पक्ष भी नैतिक तथा आध्यात्मिक दृष्टिकोण से जुड़ा हुआ है, इसलिए उसका व्यवहार उत्तरदायित्वपूर्ण (Responsible) तथा सच्चाई, ईमानदारी, भाईचारे और एहसान पर आधारित होता है, न कि धोखाधड़ी, ज़ुल्म, अत्याचार, घृणा तथा भेदभाव पर। (विस्तार से देखें अध्याय-8)

5.2 मध्यमार्गी व्यवहार

"अल्लाह के नेक बन्दे वे हैं जो ख़र्च करने में न अति करते हैं और न कंजूसी, वरन् इन दोनों के बीच सन्तुलन पर रहते हैं।" (25 : 67)

"अपने हाथ न तो अपनी गरदन से बाँध रखो (कि कुछ ख़र्च ही न करो) और न बिलकुल ही खोल दो कि निन्दित और निस्सहाय होकर बैठ जाओ।" (17 : 29)

उपर्युक्त शिक्षाओं का उद्देश्य यह है कि प्रत्येक व्यक्ति अपने साधनों की सीमा में रहकर ख़र्च करे। उसका ख़र्च न इतना बढ़ जाए कि दूसरों के सामने हाथ फैलाता फिरे और दूसरों की कमाई पर डाके डाले, वास्तविक आवश्यकता

न होने पर भी ऋण ले और उसे पचा जाए अथवा ऋणों का भुगतान करते-करते ख़ुद दरिद्र बन जाए। दूसरी ओर इतना कंजूस भी न हो कि उसके साधन उसको जितने ख़र्च की अनुमति देते हैं उतना भी न करे। इन दोनों अतियों (Extremes) से रोका गया है तथा एक सन्तुलित आर्थिक व्यवहार की शिक्षा दी गई है। संन्यास तथा विलासिता दोनों पर प्रतिबन्ध लगाकर भी सन्तुलन स्थापित किया गया है।

5.3 असम्पन्न को क्रयशक्ति प्रदान करने का प्रबन्ध

सम्पन्न वर्ग को आदेश दिया गया है कि अपव्यय रोककर वे अपने नातेदारों, दोस्तों, पड़ोसियों तथा अन्य दीन-दुखियों की मदद करे। इससे ये लोग भी क्रयशक्ति प्राप्त कर आर्थिक क्रियाओं में संलग्न होंगे—

"अपने नातेदारों को उनका हक़ दे और निर्धन और मुसाफ़िर को भी। फ़ुज़ूलख़र्ची न कर कि फ़ुज़ूलख़र्ची करनेवाले शैतानों के भाई हैं।"

(17 : 26-27)

(इस विषय पर विस्तार से अध्याय-6 में देखें।)

5.4 उपभोक्ता-व्यवहार द्वारा वित्त का संचार

धन को अर्थव्यवस्था में संचारित रखने के उद्देश्य से हुक्म दिया गया है कि अतिरेक को रोकने के बजाए ख़र्च करो—

"लोग तुमसे पूछते हैं कि क्या ख़र्च करें, कह दीजिए कि जो कुछ तुम से बच रहे।" (2 : 219)

"जिन लोगों को अल्लाह ने अपनी उदार अनुकम्पा से दिया है और फिर वे कंजूसी से काम लेते हैं, वे यह न समझें कि यह कंजूसी उनके लिए अच्छी है। नहीं, यह उनके लिए बहुत ही बुरी है।" (3 : 180)

5.5 आर्थिक व्यवहार के सन्तुलन हेतु क़ानूनी प्रतिबन्ध

आर्थिक व्यवहार को सन्तुलन से विचलित करनेवाली सभी गतिविधियों पर नैतिक शिक्षा के अतिरिक्त क़ानूनी प्रतिबन्ध भी लगाए गए हैं। (देखिए अध्याय-3 में प्रस्तर 3.5)

लोक-वित्त (Public Finance)

इस्लाम एक कल्याणकारी व्यवस्था है। अतः इसमें लोक-वित्त का महत्त्व समाजिक कल्याण की दृष्टि से बहुत अधिक है। मदीने में छोटी-सी इस्लामी स्टेट स्थापित होते ही बैतुलमाल (सरकारी कोषागार) स्थापित किया गया, जिसमें अनिवार्य एवं ऐच्छिक योगदानों का प्रबन्ध किया गया।

6.1 अनिवार्य योगदान : ज़कात (Poor Due)

नमाज़ के बाद इस्लाम का दूसरा स्तम्भ और इबादत ज़कात है। ज़कात प्रत्येक उस मुस्लिम पर अनिवार्य है जो एक सीमा से अधिक धन व चल सम्पत्ति रखता हो। यह एक प्रकार का कर (Tax) है, मगर प्रचलित करों से भिन्न है। यह आय पर नहीं, बल्कि धन और चल सम्पत्तियों पर लगाया जाता है। यह धनी से लेकर निर्धन पर ख़र्च किया जाता है। वास्तव में ज़कात एक प्रकार का सामाजिक बीमा भी है।

''नमाज़ की व्यवस्था करो और ज़कात दो।'' (2 : 43)

उपर्युक्त आदेश क़ुरआन में अनेक स्थानों पर आया है। एक स्थान पर तो व्यय की मदें भी निर्धारित कर दी गई हैं—

''सदक़े (ज़कात) तो वास्तव में ग़रीबों और मुहताजों के लिए हैं और उन कर्मचारियों के लिए जो ज़कात वसूल करने और वितरित करने पर नियुक्त हों और उनके लिए जिनके दिलों को आकृष्ट करना हो और गरदनों को छुड़ाने में और ऋणियों की सहायता में और अल्लाह के मार्ग में और यात्रियों की सहायता करने में।''[1] (9 : 60)

ज़कात की व्यय की इन मदों को देखकर अनुमान लगाया जा सकता है कि इस्लाम की आर्थिक नीति की बुनियाद क्या होगी। एक कल्याणकारी

---

1. 'गरदन छुड़ाने' से अभिप्राय है ग़ुलाम को आज़ाद कराना। 'अल्लाह के मार्ग में' उन सब ख़र्चों को लिया जा सकता है जो ईश्वरीय आदेश की पूर्ति के लिए, आवश्यक हों।

राज्य (Welfare State) का पूर्ण चित्रण यहाँ विद्यमान है। धनी लोग जब प्रत्येक वर्ष अपने संचित धन का 2.5 प्रतिशत स्टेट के कोषागार में जमा करेंगे, जहाँ से यह धन निर्धन के पास जाएगा तो आर्थिक असमानता निरन्तर कम होती चली जाएगी। दूसरी ओर कल्याणकारी राज्य के निर्धनों से सम्बन्धित सभी योजनाएँ इस भारी फ़ंड द्वारा पूर्ण होती जाएँगी।

एक धार्मिक फ़र्ज़ होने के नाते ज़कात को अदा करते हुए मनुष्य के अन्दर पुण्यभाव और ईशभक्ति पैदा होती है।

6.2 ऐच्छिक योगदान

राज्य-कोषागार में लोग ऐच्छिक योगदान करते हैं। अनिवार्य योगदान (ज़कात) के अलावा ईश-प्रसन्नता हेतु लोग दान-पुंण्य करते हैं।

6.3 अन्य स्रोत

1. विशेष योगदान — विशिष्ट कामों, आपातकालीन आवश्यकताओं (युद्ध आदि) के लिए स्टेट द्वारा घोषणा करने पर विशेष रूप से भी धन दिया जाता है।

2. ग़नीमत — युद्ध में दुश्मन द्वारा छोड़े गए माल को ग़नीमत का माल कहा जाता है। ग़नीमत के संबंध में क़ुरआन में है—

"तुमको ज्ञात होना चाहिए कि जो कुछ भी ग़नीमत तुम प्राप्त करो उसका पाँचवाँ भाग अल्लाह और रसूल और नातेदारों और अनाथों और यात्रियों के लिए है।" (8 : 41)

अर्थात् चार भाग सेनानियों के और पाँचवाँ अल्लाह, रसूल, उनके नातेदारों और मुहताजों आदि का है। ज्ञातव्य है कि ज़कात में रसूल और उनके नातेदारों का हिस्सा नहीं है।

3. फ़ै — वह धन जो दुश्मन बिना लड़े ही छोड़कर भागे। क़ुरआन में है—

"अल्लाह ने उनसे अपने रसूल को जो कुछ 'फ़ै' प्राप्त कराया उसके

लिए न तो तुमने घोड़े दौड़ाए और न ऊँट, परन्तु अल्लाह अपने रसूलों को जिस पर चाहता है प्रभुत्व प्रदान कर देता है।'' (59 : 6)

6.4 मूलाधार

इस व्यवस्था में लोकवित्त का मूलाधार यह है कि संसाधन (Resources) धनवानों के बीच ही चक्कर न लगाते रहें, बल्कि उनका रुख़ निर्धनों और ज़रूरतमंदों की ओर होना चाहिए। क़ुरआन की शिक्षा यह है—

''ऐसा न हो कि तुम्हारा माल तुम्हारे धनवानों के बीच ही चक्कर लगाता रहे।'' (59 : 7)

अध्याय-7

आर्थिक विकास
(Economic Development)

7.1 अवधारणा

एक कल्याणकारी व्यवस्था के नाते इस्लाम ने ऐसे वातावरण के निर्माण के लिए रास्ता साफ़ किया है जिसमें लोग अपने क़ल्याण (Well-being) पर ध्यान दें और आर्थिक विकास हो सके।

7.2 धनोपार्जन की दौड़-धूप

ईश-पूजा के बाद धनोपार्जन की दौड़-धूप को क़ुरआन में मुस्लिम के कर्त्तव्य के रूप में प्रस्तुत किया गया है—

"फिर जब नमाज़ पूरी हो जाए तो धरती में फैल जाओ और अल्लाह का फ़ज़्ल (आजीविका) तलाश करो।" (63 : 10)

7.3 भयरहित व उपद्रवरहित वातावरण का निर्माण

मक्के के क़ुरैशवंश को काबा की सेवा के कारण अरब में विशिष्ट सम्मान प्राप्त था, जिससे वे अपने व्यापारिक कार्य में सुविधा पाते थे। इसका उल्लेख क़ुरआन में अल्लाह की नेमत के रूप में किया गया है—

"चूँकि क़ुरैश हिलमिल गए थे अर्थात् जाड़े और गर्मियों की (व्यापारिक) यात्राओं से हिलमिल गए थे; उनको चाहिए कि इस घर (काबा) के प्रभु की पूजा-बन्दगी करें, जिसने उन्हें भूख से बचाकर खाने को दिया और भय से बचाकर निश्चिन्तता प्रदान की।" (106 : 1-4)

अर्थात् एक भयरहित वातावरण के कारण ही वे तिजारत कर सके। एक अन्य स्थान पर शान्तिभंग करने को हत्या से अधिक जघन्य अपराध माना गया है—

"और फ़ितना (उपद्रव) हत्या से भी अधिक संगीन चीज़ है।"

(2 : 191)

फ़ितने से मुराद अत्याचार, ज़ोर-ज़बरदस्ती और अशान्ति का माहौल है। आशय यह है कि हत्या तो बुरी चीज़ है ही; उससे अधिक बुरी चीज़ यह है कि पूरा माहौल ही बिगाड़ कर रख दिया जाए। स्पष्ट है कि आर्थिक क्रियाएँ बहुत कुछ शांति एवं अनुकूल वातावरण पर निर्भर करती हैं, इसलिए इस फ़ितने को कुचलने के लिए क़ुरआन बल प्रयोग की अनुमति देता है—

"उनसे जंग (युद्ध) करो, यहाँ तक कि फ़ितना शेष न रहे।"

(2 : 193)

7.4 अपव्यय पर रोक

आर्थिक विकास के अवरोधों में से एक बड़ा अवरोध अपव्यय और क्षय (Wastage) है। जिस पर क़ुरआन रोक लगाता है—

"अपव्यय न करो, अल्लाह अपव्यय करनेवालों को पसन्द नहीं करता।"

(6 : 141)

"अपव्यय करनेवाले लोग शैतान के भाई हैं।" (17 : 27)

7.5 कंजूसी भी नहीं

दूसरी ओर कंजूसी करने और धन व साधनों को रोक रखने की मनाही की गई है, क्योंकि इससे साधन निष्क्रिय होकर रह जाते हैं और आर्थिक विकास पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। क़ुरआन में कहा गया है—

"तबाही है हर उस व्यक्ति के लिए जो लोगों पर ताना मारने और पीठ पीछे बुराइयाँ करने का अभ्यस्त है, जिसने माल इकट्ठा किया और उसे गिन-गिनकर रखा।" (104 : 1-3)

"जो लोग सोना-चाँदी इकट्ठा करके रखते हैं और उसे ईशमार्ग में ख़र्च नहीं करते उन्हें पीड़ाजनक यातना की सूचना दे दो।" (9 : 34)

"जिन लोगों को अल्लाह ने अपनी उदार अनुकम्पा से दिया है फिर वे कृपणता (कंजूसी) से काम लेते हैं। वे यह न समझें कि यह कृपणता उनके लिए अच्छी है; नहीं, यह उनके लिए बहुत ही बुरी है।" (3 : 180)

7.6 व्यापार-चक्र (Trade Cycle)

वर्तमान समय की जटिल आर्थिक समस्याओं में से एक यह है कि अर्थ-व्यवस्था पर तेज़ी-मन्दी के दौरे पड़ते रहते हैं, जिन्हें व्यापार-चक्र (Trade Cycle) कहा जाता है। उपर्युक्त शिक्षाएँ अर्थ-व्यवस्था को इस रोग से बचाने के कारगर उपाय हैं। मन्दी आती ही उस समय है जब लोग अपनी माँग को कम करने लगते हैं जिससे धन बाज़ार में नहीं आता। इस सन्दर्भ में क़ुरआन की इस शिक्षा पर विचार बड़ा सार्थक होगा—

"लोग तुम से पूछते हैं कि क्या ख़र्च करें, कह दीजिए, जो कुछ भी बच जाए।" (2 : 219)

7.7 प्रसंविदा एवं लिखित प्रमाण का प्रचलन

क़ुरआन ने प्रसंविदा एवं लिखित क़रार का प्रचलन करके व्यापारिक लेन-देन को आधार प्रदान किया—

"ऐ ईमान लानेवालो! जब किसी निश्चित समय के लिए तुम आपस में ऋण का लेन-देन करो, तो उसे लिख लिया करो। दोनों पक्षों के बीच न्यायपूर्वक एक व्यक्ति दस्तावेज़ लिखे। जिसे अल्लाह ने लिखने-पढ़ने की योग्यता दी हो उसे लिखने से इनकार नहीं करना चाहिए। लिखनेवाला लिखे और बोलकर वह व्यक्ति लिखवाए जिस पर दायित्व बनता हो (अर्थात् ऋणी)। उसे अपने प्रभु, अल्लाह, से डरना चाहिए कि जो मामला निश्चित हो गया है, उसमें कमी-बेशी न करे। परन्तु यदि ऋण लेनेवाला नादान या कमज़ोर हो या बोलकर न लिखा सकता हो तो उसका संरक्षक बोलकर लिखाए..... मामला छोटा हो या बड़ा अवधि के निर्धारण के साथ उसकी दस्तावेज़ लिखवाने में सुस्ती न करो। अल्लाह की दृष्टि में यह नियम तुम्हारे लिए अधिक न्यायसंगत है; इससे गवाही स्थापित होने में आसानी होती है और सन्देहों में पड़ने की आशंका कम हो जाती है; हाँ जो, व्यापारिक लेन-देन हाथ के हाथ तुम आपस में करते हो उसको न लिखा जाए तो कोई दोष नहीं। मगर व्यापारिक मामले तय करते समय गवाह कर लिया करो..... यदि तुम किसी यात्रा पर हो और दस्तावेज़ लिखने की कोई व्यवस्था न हो तो गिरवी रखकर मामला करो।"

(2 : 282-283)

7.8 नियम-क़ानून

आर्थिक विकास में अवरोध करनेवाली सामाजिक बुराइयों को सशक्त ढंग से रोकने सम्बन्धी नियम-क़ानून बना दिए गए हैं। चोरी, डकैती, व्यभिचार, झूठ, धोखा, शराबख़ोरी, जुआ खेलने आदि पर रोक लगा दी गई है। (देखिए तृतीय अध्याय में प्रस्तर 3.5)

7.9 कुछ बुनियादी शिक्षाएँ

उत्पत्ति के साधनों के सम्बन्ध में-कुछ बुनियादी शिक्षाएँ देकर आर्थिक विकास में योगदान किया गया है। (देखिए अध्याय-4)

7.10 ब्याज पर रोक

ब्याज़ आर्थिक विकास पर प्रतिकूल प्रभाव डालता है, उत्पादन की गति पर रोक लगाता है, आर्थिक असमानता को बढ़ाता है, वर्ग संघर्ष की प्रवृत्ति पैदा करता है। इसी लिए लिए क़ुरआन ब्याज़ पर पूरी तरह प्रतिबंध लगता है। (देखिए चौथे अध्याय के प्रस्तर 4.4 में।)

मानवीय मूल्यों पर आधारित अर्थव्यवस्था

(Economy Based On Human Values)

8.1 नैतिक मूल्यों का महत्त्व

मानवीय व्यवहार बड़ी हद तक सामाजिक मान्यताओं एवं मूल्यों से नियन्त्रित होता है। आर्थिक क्रियाओं को इससे अलग करके अध्ययन करना उचित नहीं है। दुर्भाग्यवश आधुनिक अर्थशास्त्र ने नैतिक मूल्यों और उद्देश्यों के प्रति तटस्थता तथा उदासीनता को आधार बनाया, परिणामतः अर्थशास्त्र ने स्वार्थपरता को बढ़ावा दिया और मानवीय मूल्यों की महत्ता कम हुई। लाभ को अधिकतम करने के नाम पर अनेक घृणित कृत्यों को बढ़ावा दिया गया। यद्यपि पाश्चात्य अर्थशास्त्रियों को भी अब नैतिक मूल्यों के महत्त्व का आभास होने लगा है। यह अलग बात है कि परलोक की धारणा के अभाव में ईमानदारी (Honesty) मात्र एक नीति (Policy) बन कर रह गई है, विश्वास या आस्था का स्थान नहीं ले सकी। इस्लाम ने आर्थिक क्रिया को सम्पूर्ण मानवीय जीवन का एक अंग स्वीकारते हुए उसे जीवन-मूल्यों से जोड़ दिया है।

8.2 सामान्य सिद्धान्त

क़ुरआन ने सच्चाई पर बहुत बल दिया है (33 : 70)। न्याय करने, न्याय पर डटे रहने, इंसाफ़ के साथ गवाही देने का आदेश दिया। (4 : 135, 4 : 58, 16 : 90-91)। अपने हक़ से कम पर राज़ी हो जाने तथा दूसरे को उसके हक़ से अधिक देकर एहसान करने पर उकसाया है। माता-पिता तथा अन्य लोगों से अच्छे व्यवहार करने की शिक्षा दी। (2 : 83, 2 : 177, 2 : 215, 4 : 36, 6 : 15, 6 : 152, 17 : 23, 17 : 34, 37 : 26 आदि) अमानत को अदा करने और उसमें ख़ियानत न करने की शिक्षा अनेक स्थानों पर मिलती है। (2 : 283, 4 : 58)। इन नैतिक मूल्यों के अभाव में व्यापार, व्यवसाय, उद्योग के लिए अनुकूल वातावरण बन ही नहीं सकता।

क़ुरआन भाईचारे को बढ़ावा देता है; रंग, नस्ल, जाति, वंश, भाषा, क्षेत्र

तथा पेशे के आधार पर मनुष्य-मनुष्य में भेदभाव को अवैध घोषित करता है। (49 : 13)

वर्तमान औद्योगिक संघर्षों की पृष्ठभूमि में इस नैतिक सिद्धान्त की सार्थकता कितनी है विचार किया जा सकता है। एक अन्य नैतिक और मानवीय गुण सब्र, धैर्य और सन्तोष है जिसको क़ुरआन में कई प्रकार से समझाया गया है। इस गुण के अभाव में व्यापारी जोखिम नहीं उठा सकता (2 : 155-156, 3 : 186 आदि)। यह गुण शोषण, अत्याचार, घृणा, भेद-भाव, लोभ-लालच से इनसान को रोकने की शिक्षा देता है।

8.3 विशिष्ट सिद्धान्त

उपर्युक्त सभी शिक्षाएँ सामान्य हैं जो जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में लागू होती हैं। इसलिए वे आर्थिक क्षेत्र में भी लागू होती हैं। इन सामान्य शिक्षाओं के अतिरिक्त आर्थिक जगत् के लिए कुछ विशिष्ट सिद्धान्त भी दिए गए हैं—

1. प्रसंविदों को पूर्ण करना

क़ुरआन की आयतों (2 : 281-283) में दस्तावेज़ तैयार करने सम्बन्धी जो आदेश दिया गया है वह हम पिछले अध्याय-7 के प्रस्तर 7.7 पर दर्ज कर चुके हैं। क़ुरआन ने सभी अनुबन्धों को पूर्ण करने की ताकीद की है—

"ऐ ईमान लानेवालो! अपने अनुबन्धों एवं प्रतिज्ञाओं को पूर्ण करो।" (5 : 1)

ईमानलानेवालों के अनेक गुणों में से यह भी है कि—

"वे अपनी अमानतों और अपने अनुबन्धों का ध्यान रखते हैं।" (23 : 8)

इस प्रकार एक मुस्लिम व्यवसायी ग्राहकों, कर्मचारियों और सरकार से किए गए अनुबन्धों, समझौतों और वादों को पूर्ण करने के लिए बाध्य है।

2. मिथ्या वर्णन एवं झूठे विज्ञापन नहीं

वर्तमान युग में मिथ्यावर्णन, झूठे विज्ञापन का चलन एक सामान्य बात है। यहाँ तक कि उपभोक्ता संरक्षण के लिए नित नए क़ानून बनाने पड़ रहे हैं। क़ुरआन ने इसे धरती के बिगाड़ की संज्ञा दी है—

"लोगों को उनकी चीज़ें देने में घाटा या गड़बड़ी न करो और धरती में बिगाड़ फैलाते न फिरो।" (11 : 85)

3. उचित नाप-तौल

आर्थिक जगत् की एक पुरानी ख़राबी नाप-तौल द्वारा धोखा देना है, जिससे हम आज भी दो-चार हैं। इस्लाम ने इस ख़राबी को दूर करने के लिए जहाँ क़ानूनी उपाय किये हैं वहीं परलोक की यातना से भी डराया है। क़ुरआन में है—

"नाप-तौल न्यायपूर्वक पूरा-पूरा किया करो।" (11 : 85)

"जब नाप कर दो तो पैमाने(मापक) को पूरा भरो और जब तौलो तो ठीक तराज़ू से तौलो; यही उत्तम है और इसका नतीजा भी भला है।" (17 : 35)

"तुम पूरा-पूरा नापो-तौलो और लोगों को उनकी चीज़ों में घाटा न पहुँचाओ और धरती में बिगाड़ न फैलाओ। जबकि सुधार किया जा चुका हो।" (7 : 85)

"तुम तुला (तराज़ू) में गड़बड़ी न करो और इंसाफ़ के साथ ठीक तौलो, कम न तौलो।" (55 : 8-9)

नाप-तौल की गड़बड़ी की निन्दा कितने सख़्त अन्दाज़ में की गई है—

"तबाही है डण्डी मारनेवालों की, जो लोगों से नापकर लेते हैं तो पूरा-पूरा लेते हैं और जब उन्हें नापकर या तौलकर देते हैं तो घटाकर देते हैं। क्या ये लोग नहीं समझते कि उन्हें एक बड़े दिन के अवसर पर जी उठना है (और हिसाब देना है)।" (83 : 1-6)

4 उत्पादन को नष्ट करने की अनुमति नहीं

मूल्यों को गिरने से रोकने के लिए उत्पादित माल को नष्ट करने की कुप्रथा दुनिया में बढ़ रही है। भारत के महाराष्ट्र राज्य के एक समाचार-पत्र (नवम्बर 93) के अनुसार वहाँ इसी भय के कारण दूध को नालियों में बहाया गया। क़ुरआन उत्पादन के नष्ट करने को फ़साद और बिगाड़ घोषित करता है—

"जब (सच्चाई के दुश्मन) को सत्ता मिलती है तो धरती में उसकी सारी

दौड़-धूप इसलिए होती है कि उसमें बिगाड़ पैदा करे। खेती और नस्ल को तबाह करे, हालाँकि अल्लाह बिगाड़ को पसन्द नहीं करता।" (2 : 205)

इस विशिष्ट शिक्षा के अतिरिक्त प्रत्येक प्रकार के अपव्यय को रोका गया है जिसका विवरण पूर्व के अध्यायों में आ चुका है।

5. ब्याज

ब्याज आर्थिक सामाजिक और मानवीय दृष्टि से अनुचित एवं अन्यायपूर्ण है, अतः इसे अवैध घोषित किया गया (विवरण चौथे अध्याय के प्रस्तर 4.4 में देखें)

6. कारोबार के घाटे पर मनोबल न गिरे

व्यापारिक गतिविधियों में लाभ और हानि साथ-साथ चलती है। किसी हानि कि स्थिति में दिल छोटा करने या हतोत्साहित होने से बचाने के लिए कितनी क़ीमती बात कही गई है—

"निस्सन्देह हम तुम्हारी परीक्षा लेंगे कुछ भय से, कुछ भूख से, कुछ जान-माल और पैदावार के घाटे से। तो सब्र करनेवालों को शुभ-सूचना दे दो। ये वे लोग हैं कि जब उन्हें कोई मुसीबत पहुँचती है तो कहते हैं कि बेशक हम अल्लाह ही के लिए हैं और हमें उसी की ओर पलट कर जाना है।"

(2 : 155-156)

क़ुरआन में सब्र करने की बात अनेक स्थानों पर अलग-अलग सन्दर्भों में दोहराई गई है। प्रस्तुत आयत में इसे साहसपूर्ण कार्य बताया है—

"तुम सब्र और नेकी की रीति निभाते रहो निश्चय ही यह बड़े साहस का काम है।" (3 : 186)

इस प्रकार हम देखते हैं कि क़ुरआन ने मानवीय मूल्यों पर आधारित अर्थ-व्यवस्था का ढाँचा प्रस्तुत किया है। हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) ने इसे व्यापार, व्यवसाय, दुकान, बाज़ार और कारीगर तथा कृषक पर सामान्य रूप से लागू किया और देखते-देखते आर्थिक रूप से दरिद्र-क्षेत्र समृद्धिशाली हो गया। हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) के कथनों और आदेशों को क़ुरआन की इन शिक्षाओं के साथ अध्ययन करने पर इस्लामी आर्थिक प्रणाली का पूर्ण स्वरूप सामने आ सकता है।

अध्याय-9

इस्लामी आर्थिक प्रणाली की विशेषताएँ[1]

(Characteristics Of Islamic Economic System)

क़ुरआन में मनुष्य के आर्थिक जीवन के लिए जो स्कीम प्रस्तुत की गई है, उसके मूल सिद्धान्त तथा मुख्य लक्षण इस प्रकार हैं—

1. यह स्कीम ऐसे ढंग से आर्थिक न्याय स्थापित करती है कि एक ओर तो हर प्रकार का ज़ुल्म, अत्याचार और शोषण समाप्त हो जाए तथा दूसरी ओर समाज में नैतिक गुणों को बढ़ावा मिले। लोग एक-दूसरे के साथ स्वेच्छा तथा निःस्वार्थ भाव से हमदर्दी और एहसान का व्यवहार करें और उनके बीच प्रेमभाव पनपे। इसके लिए लोगों को ईमान व आस्था तथा शिक्षा-दीक्षा द्वारा उच्चकोटि का इनसान बनाने का यत्न किया जाता है। फिर जो कमी रह जाती है, उसके लिए आदेशों से काम लिया जाता है। आवश्यकता पड़ने पर जनहित में इन आदेशों को बलपूर्वक भी लागू किया जा सकता है।

2. इसमें आर्थिक मूल्यों को नैतिक मूल्यों से अलग रखने के बजाए दोनों को एक-दूसरे से जोड़ दिया गया है। आर्थिक समस्याओं को मात्र आर्थिक दृष्टिकोण से हल करने के बजाए उन्हें उस सम्पूर्ण जीवन-व्यवस्था के साथ रखकर हल किया गया है जिसकी धारणाएँ व सिद्धान्त ईश-भक्ति पर आधारित हैं।

3. इस धरती के साधनों को मानवजाति के लिए ईश्वर की आम अनुकम्पा के रूप में प्रस्तुत किया गया है। इसलिए व्यक्तिगत, वर्गीय अथवा राष्ट्रीय एकाधिकार की कोई गुंजाइश नहीं है। अल्लाह की धरती पर मानवजाति को आजीविकोपार्जन के अधिक से अधिक अवसर उपलब्ध होने चाहिए।

4. इसमें लोगों को व्यक्तिगत स्वामित्व का अधिकार दिया गया है, किन्तु असीमित नहीं। व्यक्ति के स्वामित्व के अधिकार पर दूसरे लोगों तथा समाज के हित के लिए कुछ प्रतिबन्ध भी लगाए गए हैं। यह स्कीम हर व्यक्ति के माल में उसके नातेदारों, पड़ोसियों, मित्रों, और दूसरे असहाय, व निर्धन

---

1. यह अध्याय मौलाना अबुल आला मौदूदी (रह०) के एक उर्दू लेख का रूपान्तर है। देखें 'मआशियाते-इस्लाम' पृष्ठ 113-116

लोगों, अर्थात पूरे समाज, के हक़ भी बताती है जिनमें कुछ अनिवार्य (जैसे ज़कात) तथा कुछ ऐच्छिक रखे गए हैं।

5. इस स्कीम द्वारा प्रदत्त आर्थिक प्रणाली स्वतन्त्र रूप से कार्य करती है, परन्तु समाज और उस कार्य से जुड़े लोगों के हित में इस पर कुछ प्रतिबन्ध भी लगाए गए हैं। जैसे–आय और व्यय के अनैतिक अथवा हानिकारक कृत्यों पर रोक है।

6. इसमें स्त्री तथा पुरुष दोनों को उनके द्वारा अर्जित अथवा उत्तराधिकार में प्राप्त अथवा किसी अन्य उचित साधन से प्राप्त धन का मालिक माना गया है। दोनों लिंगवर्गों (Sexes) को अपने स्वामित्व के अधिकार से लाभान्वित होने के समान अधिकार दिए गए हैं।

7. आर्थिक सन्तुलन स्थापित करने हेतु एक ओर तो कंजूसी तथा संन्यास से रोककर ईश्वर की नेमतों के उपयोग पर उभारा गया है तथा दूसरी ओर उन्हें अपव्यय एवं ऐयाशी से दृढ़तापूर्वक रोका गया है।

8. इसमें आर्थिक न्याय स्थापित करने के लिए यह व्यवस्था की गई है कि धन का प्रवाह न तो अनुचित साधनों की ओर चल पड़े और न वैध उपायों से प्राप्त धन एक स्थान पर केन्द्रित होकर निष्क्रिय हो जाए। धन अधिक से अधिक प्रवाहित होता रहे। इस प्रक्रिया में उन लोगों को भी अंश प्राप्त होता रहे जो किसी कारणवश वंचित रह गए हैं।

9. यह स्कीम आर्थिक न्याय स्थापित करने के लिए क़ानून तथा राज्य के हस्तक्षेप पर अधिक निर्भर नहीं है। कुछ अत्यावश्यक उपायों को राज्य के कर्त्तव्य घोषित करने के उपरान्त यह स्कीम शेष को लोगों के मानसिक उत्थान, नैतिक शिक्षा तथा समाज–सुधार द्वारा पूर्ण करने की व्यवस्था दी गई है।

10. समाज के विभिन्न वर्गों में वर्ग–संघर्ष छेड़ने के बजाए, यह स्कीम संघर्ष के कारणों को समाप्त करके उनके बीच सहयोग और भाईचारा पैदा करती है।

ये उसूल हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) तथा उनके ख़लीफ़ाओं के युग में जिस प्रकार से व्यावहारिक रूप से राज्य एवं समाज की व्यवस्था में लागू किए गए थे; उससे हमको आदेशों और उदाहरणों के रूप में बहुत–से विवरण प्राप्त होते हैं। हदीस, इतिहास तथा फ़िक़्ह (धर्मशास्त्र) की पुस्तकों से इनकी जानकारी प्राप्त की जा सकती है।